आधुनिक कवि राधावल्लभ त्रिपाठी द्वारा रचित 'गीतधीवरम्' ।

आधुनिक संस्कृत जगत् के अमुल्य रत्न एवं सहृदय कवि प्रो. राधावल्लभ त्रिपाठी संस्कृत के प्रख्यात नाटककार, निबंधकार, लेखक, उपन्यासकार, अनुवादक, समीक्षक एवं आलोचक हैं। इनकी प्रमुख रचना 'गीतधीवरम्'(धीवरगीति) है जो कि रागकाव्य है। अर्थात् ऐसा काव्य जिसमें विविध गेय राग हैं। धीवर अर्थात् निषाद्- संसारसागर को कुशलतापूर्वक पार कराने वाला पुरुष। अंग्रेजी में Boatman and Fisherman.

'गीतधीवरम्'

प्रथमो सर्गः गीतिः ४

1. विपुला धरणी- ततोऽपि विपुलः सागरतलविस्तारः।

विपुलतरोऽयं परं त्वदीयः सङ्कल्पाकूपारः॥

यह पृथ्वी(**धरणी**) अतिविस्तृत(**विपुला**) है। परन्तु सागर का विस्तार इससे भी ज्यादा है। उससे भी विशाल तुम्हारा(धीवर का) संकल्प(निश्चय) है।

व्याख्या- कवि के कहने का अभिप्राय यह है हे मनुष्यों! तुम्हारा दृढ़ निश्चय ही सबसे बडा है। सबको धारण करने से पृथ्वी धरणी कहलाती है और यह पृथ्वी अत्यन्त विस्तृत है और सागर इस पृथ्वी से भी बड़ा है। इन सबसे बड़ा तुम्हारा दृढ़ निश्चय है। यदि व्यक्ति दृढ़ निश्चय कर ले तो बड़े से बड़े सागर को भी पार कर जाता है। सागर में जो लहरें आती हैं वो धीवर(Boatman/Fisherman) को उसके लक्ष्य तक पहुँचने में बाधाएँ बनती हैं। ऐसे में धीवर को दृढ़ निश्चय करना चाहिये।

कवि के कहने का तात्पर्य है कि जिस प्रकार धीवर समुद्र रूपी लहरों से लड़ता हुआ समुद्र में अपने लक्ष्य को पूरा करता है उसी प्रकार मनुष्य के भी जीवन में कई बाधाएँ आती हैं मनुष्य को भी धीवर के समान दृढ़ निश्चय करना चाहिये।

2. उद्धर धीवर मनसः क्लेशादात्मनैव चात्मानम् ।

हे धीवर! स्वात्मना(अपनी आत्मा के द्वारा) अपने मानसिक(**मनसः**) क्लेशों का शमन अपनी आत्मा में(**क्लेशादात्मनैव**) करो अर्थात् स्वयं को(**आत्मानम्**) मानसिक क्लेशों से बाहर निकालो ।

व्याख्या- धीवर को संबोधित करते हुये सभी मनुष्यों की ओर संकेत किया है कि व्यक्ति को अपने मन के भीतर क्लेश नही रखना चाहिये । जब मनुष्य के मन में सुविचार रहते हैं तो मानसिक क्लेश स्वयं ही नष्ट हो जाते हैं । मनुष्य सदैव मन में दूसरों के प्रति अच्छे विचार रखता है तो उसका मन स्वच्छ रहता है और इस प्रकार वह दृढ़ संकल्प करने में समर्थ होता है ।

3. उच्छलिता एते नौकाग्रं ग्रसितुमिवोग्रा मीनाः ।

तव भुजदण्डपेशिकामीना आभ्यस्त्वधिकं पीनाः ।

ये उग्र मीन(मछली)(**मीनाः**) तुम्हारी नौका को निगलने के लिए(**ग्रसितुम्**) आगे(**अग्रं**) उछल रही हैं(**उच्छलिता**), परन्तु इन मीनों(मछलियों) से अधिक मजबूत(पुष्ट) तुम्हारी(**तव**) भुजाएँ(बाहु) हैं ।

व्याख्या- समुद्र की जो मछलियाँ हैं वह बड़ी ही उग्र, तेज स्वभाव की हैं जो कि अपनी तरफ आती हुई नौका को निगलने के लिये उछल रही हों मानो उनका भोजन आ रहा हो जिसे वह निगलना चाहती हैं । यहाँ पर कवि उस धीवर को जो विशाल समुद्र में है, उन उग्र मछलियों से बचने के लिये कह रहा है(जो उसको निगलना चाहती हैं) और धीवर को यह याद करवा रहा है कि उन मछलियों से कहीं अधिक मजबूत उसकी भुजाएँ हैं जिनसे वह अपनी रक्षा कर सकता है ।

कवि के कहने का तात्पर्य यह है कि धीवर के समान मनुष्य भी विशाल सागर रूपी वर्तमान समाज में उग्र मछली समूह रूपी मनुष्यों से घिरा हुआ है और जिस प्रकार वह धीवर उस समुद्र में रहते हुये कठिन परिस्थितियों का सामना करते हुये अपने लक्ष्य तक पहुँचने का दृढ संकल्प लिये हुये है उसी प्रकार मनुष्य को भी मार्ग में आने वाली बाधाओं को पार कर के अपने लक्ष्य तक पहुँचना है।

4. दैन्यविहीनं त्वं विस्तारय सुदृढं मनोवितानम्।

अतएव दैन्यभाव(**बेबसी**) का परित्याग कर दृढसंकल्प(**सुदृढम्**) वाले तुम अपने मन(हृदय) का विस्तार करो।

व्याख्या- मनुष्य को बाधाओं के आ जाने पर दीन नही बनना चाहिये अपितु दीनता के भाव को दूर करके अपने हृदय का विस्तार कर अर्थात् उसे स्वच्छ बनाकर दृढ संकल्प धारण करना चाहिये आगे बढ़ने के लिये।

5.लहरीसङ्घट्टनादोऽयं तीव्रो जनयति भीतिम्।

नालं प्रसृतामभिभवितुं त्वत्कण्ठनिर्गतां गीतिम्॥

सागर की ये लहरें तीव्रभय(तीव्रो भीतिम्) उत्पन्न कर रही हैं(**जनयति**)। तुम्हारे कण्ठ से निःसृत गान इसे दूर(समाप्त) करने में समर्थ नहीं है।

व्याख्या- जब सागर तीव्रता से लहरों को उत्पन्न करता है तब उसी तीव्रता से धीवर के मन में भी भय उत्पन्न होने लगता है। तब वह धीवर भयभीत होकर अपने मन को बहलाने के लिये गीत गाता है। परन्तु कवि के कहने का तात्पर्य यह है कि वह गीत धीवर की उस स्थिति में रक्षा नही कर सकता। अतः धीवर को चाहिये कि वह मन में दृढ संकल्प करता हुआ उस स्थिति का सामना करें। ठीक इसी प्रकार मनुष्य को भी करना चाहिये।

6. स्पृशत्वकुण्ठितमागगनान्तं दिग्वलयं तव गानम्।

तुम्हारे कण्ठ से अबाधित गति से निकला(गाया हुआ) गान(गीत) समस्त दिशाओं में फैलता हुआ मानो गगन का स्पर्श कर रहा है।

व्याख्या- जब वह धीवर गीत गाता है तो मानो वह गीत बिन किसी बाधा के समस्त दिशाओं में फैलता हुआ आकाश का स्पर्श करता है।

7. प्रसरति तमस्तोम एषोऽयं यदपिच्छन्नाकाशः।

कृन्तति किन्तु तवायमथैनमन्तर्दीपप्रकाशः॥

यद्यपि यह अंधकार फैल रहा है, आकाश तक व्याप्त(**आच्छन्न**) हो गया है किन्तु तुम्हारे हृदय(अन्तरतम) से निकला गानरूपी प्रकाश उसको काटने में समर्थ है।

व्याख्या- जब बाधाओं में फंसे हुए व्यक्ति को दूर दूर तक प्रकाश नही दिखता तब मानो उसके मन से निकला हुआ जो गीत है वही गीत उस व्यक्ति को अंधकार से दूर प्रकाश की ओर ले जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि एक धीवर जब समुद्र में हो और उसकी नौका को मछलियाँ निगलना चाहती हों, समुद्र की तीव्र लहरे उसे डरा रही हों तब उस धीवर को अपनी शक्तिशाली भुजाओं से अपनी नौका की रक्षा करनी चाहिए और गीत गाकर अपने मन के भय को दूर करना चाहिये।

8. दैन्यविहिनं एवं विस्तारय सदृढ मनोवितानाम्।

इसलिए दैन्य का त्याग कर दृढ़निश्चयी बनो, मन के संकल्प को सुदृढ़ बनाओ तथा उसका विस्तार करो।

व्याख्या- जब मनुष्य धीवर के समान बाधाओं से घिरा हुआ हो तब उसे भी अपनी शक्ति का प्रयोग करके अपनी रक्षा करनी चाहिये। कवि के कहने का तात्पर्य यह है कि व्यक्ति को मुश्किल समय में दीनता का त्याग कर देना चाहिये और मन में जो संकल्प लिया है उसे और अधिक दृढ़ करके उसका विस्तार करना चाहिए।

अष्टमः सर्गः गीतिः २८

1. नौकामिह सारं सारम्

गन्तास्मि कदाचित्पारम्

उत्तीर्णः स्यामपि मन्ये

पारावारमपारम् ।

इस संसार रूपी सागर को नौका के द्वारा हम कभी न कभी पार कर(ही) जाएँगे । मैं मानता हूँ(अथवा मुझे विश्वास है) कि इस अनन्त, अथाह, अपार जलराशि को मैं पार कर जाऊँगा ।

2. इमा लहर्यो नैव स्य-

र्नावर्ता इते भवेयुः

मनः प्रगुणयाम्यग्रे

सङ्कल्पं धारं धारम्

किं वाऽत्र करिष्यति धारम्

गन्तास्मि कदाचित् पारम् ।

इस भव सागर को पार करने में सागर की ये लहरें और भँवर(आवर्त) बाधक नहीं बन पाएँगे । अपने दृढ़निश्चय के द्वारा अपने संकल्प को प्रगुणित करते हुए मैं समुद्र की हर धारा(लहर) को पार कर जाऊँगा । धारा मेरा क्या बिगाड़ सकती है ? मैं कदाचित समुद्र के पार हो जाऊँगा ।

3. गच्छति पुरः शरीरं

ध्यायति चेतस्तीरम्

तीरमुज्झितं पृष्ठे

परितः केवलमिह नीरम्

नीरमिदं तारं तारं

गन्तास्मि कदाचित् पारम् ।

मन में गंतव्य स्थल(तीर) किनारे का ध्यान करते हुए मेरा शरीर आगे बढ़ा जा रहा है । जहाँ से(जिस किनारे से) मैं चला वह पीछे होता जा रहा है, चारों ओर केवल जल ही जल है । इस नीर(जल) को चीरता हुआ, तैरता हुआ कभी-न-कभी तो मैं समुद्र पार कर जाऊँगा ।

4. सरति समस्तः संसारः

प्रोद्वेल्लति पारावारः

पारावारे नौका

नौकायां गतिसंञ्चारः ।

नौकामिह सारं सारम्

गन्तास्मि कदाचित् पारम् ॥

यह सम्पूर्ण जगत चलायमान है । जिस प्रकार सागर में एक-के-बाद-एक लहरें उठ रही हैं, आ रही हैं, जा रही हैं, ठीक उसी प्रकार मनुष्य के जीवन में भी विपत्ति(दुख, बाधा) रूपी लहरें निरन्तर आती रहती हैं, गतिसंचार होता रहता है । दृढ़संकल्प वाला व्यक्ति एक कुशल धीवर के समान(मनुष्य) जीवनरूपी नौका के द्वारा इस संसार-सागर को धैर्य एवं विवेक रूपी पतवार के सहारे पार कर जाता है ।(सांसारिक बाधाएँ उसकी गति को शिथिल नहीं कर पाती हैं) ।

इन दोनों धीवरगीतियों के माध्यम से त्रिपाठी जी ने मनुष्य को अपने आप पर पूर्ण विश्वास रखने, दृढ़ संकल्पवाला एवं दृढ़निश्चयी बनने के लिये प्रेरित किया है । जीवन में दुःख, बाधाएँ आती रहती हैं परन्तु विवेकी व्यक्ति धैर्यपूर्वक उनका सामना करता है और अपने लक्ष्य को हासिल करता है ।